ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-1* February- 2021
Innovation The Research Concept

गोस्वामी तुलसीदास के रामकाव्य में नीति तत्व
Dictums in Goswami Tulsidas Rama's Poems

Paper Submission: 02/02/2021, Date of Acceptance: 24/02/2021, Date of Publication: 25/02/2021

राकेश प्रसाद
सहायक अध्यापक,
हिन्दी विभाग,
खोपलासी हिन्दी हाई स्कूल,
न्यू चमटा, दार्जिलिंग,
पश्चिम बंगाल, भारत

सारांश

गोस्वामी तुलसीदास की भक्तिपरक रचनाओं से हम सभी परिचित है, परन्तु उनके रामचरित मानस में नीतिपरक काव्य प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं। 'नीतिपरक' काव्य रचनेवाले कवियों में रहीन, बृंद, गंग और गिरधर कविराय आदि कवियों की भाँति गोस्वामीजी के नीतिपरक काव्य भी बड़े मूल्यवान हैं और जीवनानुभवों से सम्पृक्त हैं। यद्यपि गोस्वामीजी के काव्य रचने का उद्देश्य रामकथा कहना था परन्तु रामकथा कहने के मार्ग में नीतिपरक काव्य अनायास ही आते चले गये कवि विभिन्न मार्मिक स्थलों पर भावुक होकर अनायास ही नीति तत्वों से ओत–प्रोत वचनों को उपदेशात्मक ढंग से कहने लगता है। इस आलेख का मूल उद्देश्य गोस्वामीजी के नीतिपरक काव्यों से पाठकों को परिचित कराना है तथा आज के युग में उन काव्यों की प्रांसगिकता स्पष्ट करना है।

We are all acquainted with devotional composition of Goswami Tulsidas. But a plenty of didactic poems are present in his 'Ramcharit Manas'. Like the poets Rahim, Brind, Gang, Giridhar Kabirai etc. who are composer of didactic poems, Goswamiji's didactic poems are also very precious and plunged in life experiences.

Although Goswamiji's purpose of composing poems was to tell Rama's story didactic composition came spontaneously during telling Rama's story. The poet being emotional at various emotive spots, spontaneously asserts didactic statements in preaching manner. The uppermost aim of this writing is to acquaint the readers with Goswamiji's didactic poems as well as to clearify the relevance of those poems in the present age.

मुख्य शब्द : नीति काव्य, संत, असंत, लोकनीति, राजनीति, पुनरुत्थान, समन्वय, ज्ञान, भक्ति, संगुण, निर्गुण, मित्रता, प्रेम, प्रसंगिकता।

प्रस्तावना

तुलसी के नीतिपरक काव्य पर विचार करने से पूर्व 'नीति काव्य' के संदर्भ में विचार कर लेना अपेक्षित है। 'नीति काव्य में मनुष्य को आन्तरिक और वाह्य परिस्थितियों के साथ उसके कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य का निर्देश होता है। मनुष्य जिस समाज में रहता है उसकी सम–विषम परिस्थितियों में उसे किस प्रकार रहना चाहिए, यह नीति काव्यकार का उद्देश्य होता है, अर्थात् जो काव्य कुमार्ग से हटाकर मानव मात्र को सुमार्ग पर चलने की प्रेरणा दे और अंधकार से निकालकर, प्रकाश की ओर ले जाय ऐसे काव्य को नीति काव्य कहते हैं। गोस्वामीजी के रामचरित्मानस एवं उनके अन्य कुछ ग्रंथों में ऐसे वक्तव्यों की प्रचुरता है। आचार्य शुक्ल ने भी अपनी पुस्तक 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में स्वीकार किया है कि "रामचरित् मानस में तुलसी केवल कवि के रूप में ही नहीं, उपदेशक के रूप में भी सामने आते हैं। उपदेश उन्होंने किसी न किसी पात्र के मुख से कराये हैं, इससे काव्य दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि ये उपदेश पात्र के स्वभाव चित्रण के साधन रूप हैं। पर बात यह नहीं है। वे उपदेश के लिए ही हैं।"[1] उसी ग्रंथ में आचार्य शुक्ल लिखते हैं कि "नीति के उपदेश की भक्ति पद्धति पर बहुत से दोहे रामचरित् मानस और दोहावली में मिलेंगे जिनमें बड़ी मार्मिकता से कहीं–कहीं बड़े रचनाकौशल से व्यवहार की बातें कहीं गयी हैं।"[2] अतः उनके नीतिपरक काव्यों एवं नीतियों को निम्नलिखित संदर्भों में परखा जा सकता है।

अध्ययन के उद्देश्य

सामाजिक जीवन के संदर्भ में लोकनीति

जीवन के विविध–फलकों पर गोस्वामीजी की दृष्टि बड़ी सूक्ष्म और गहरी थी क्योंकि गोस्वामी जी ने जीवन में बड़ा दुःख झेला था। मूल नक्षत्र में पैदा होने के कारण माता–पिता द्वारा उन्हें त्याग दिया गया। बाल्यकाल भीख माँगते हुए गुजरा। बड़े होने पर जातिवादी, ब्राह्मणवादी और संस्कृतवादी काशी के पंडितों ने इनका बड़ा अपमान किया। उन्हें गालियाँ भी सुननी पड़ी। अतः संतों और असंतों से उनका खुब पाला पड़ा। यही कारण है कि जब उन्होंने मानस लिखा तो अपने जीवनानुभवों का खुब उपयोग किया। उन्होंने अपने रामचरित् मानस में संतों और असंतों का भेद बताया जिसे आत्मसात कर मानव संतों अर्थात् सज्जनों की संगति करे और दुर्जनों से दूर रहें वे संतों के विषय में लिखते हैं –

"साधु चरित सुभ चरित कपासु,
निरस विसद गुनमय फलजासू।
जो सहि दुख पर छिद्र दुरावा,
वंदनीय जेहि जग जस पावा।"[3]

वे दुराचारी व्यक्ति के विषय में लिखते हैं –

"जेहि ते नीच बड़ाई पावा,
सो प्रथमहि हति ताहि नसावा।
घूम अनल संभव सुन भाई,
तेहि बुझाव घन पदवी पावा।"[4]
हरि हर जस राकेश राहु से,
पर अकाज भट सहस बाहु से
जे परदोष लखहि सहसाखी,
पर हित घृत जिनके मन माखी।।

गोस्वामीजी का नीति कथन है कि इस संसार में दुःख–सुख, पाप–पुण्य, साधु–असाधु देवता–दानव, अमृत–विष ईश्वर ने सबकुछ रचा है पर संतों को विवेकपूर्ण ढंग से गुण युक्त पदार्थों को ग्रहण करना है और दोष से युक्त पदार्थों अर्थात् दुर्जनों का परित्याग करना है –

"जड़ चेतन गुण दोष मय, विस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय, परि हरि वारि विकार।"[5]

अतः मानव को सज्जनों की संगति करनी चाहिए क्योंकि

"बिनु सत संग विवेक न होई,
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।
सत संगत मुद मंगल मूला,
सोई फल सिधि सब साधन फूला"[6]

वे कहते हैं दुष्टो की संगति तो नर्क से भी अधिक दुखदायी है –

"बरु भल बास नरक कर ताता,
दुष्ट संग जन देई विधाता।"[7]

कवि ने तो यहाँ तक कह दिया है कि दुष्ट भी संत संगति पाकर सुधर जाते हैं –

"सठ सुधरहि सत संगति पाई,
पारस परस कुधात सुहाई।
विधि बस सुजन कुसंगति परहीं,
फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।"[8]

परंतु जो उत्तम चरित्रवाले व्यक्ति है उन पर ही कुसंगति का प्रभाव नहीं पड़ता। उदाहरण के लिए महात्मा बुद्ध, रामकृष्ण परमहंस, गाँधी के पास कोई दुर्जन व्यक्ति जाता था तो वह सुधर जाता था। दुर्जन व्यक्ति की बुराइयों का उन महापुरुषों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था पर साधारण आमलोगों पर दुर्जनों के अवगुणों का बुरा प्रभाव तो पड़ता ही है गोस्वामी जी कहते हैं –

"ग्रह भेषज, जल पवन, पट, पाइ कुजोग सुजोग
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छण लोग।"[9]

अतः कवि के अनुसार मानव को दुर्जनों की संगति त्याग कर सज्जनों की संगति करनी चाहिए ऐसा करने से मनुष्य सज्जनों के गुणो को ग्रहण कर प्रगति के पथ पर अग्रसर होता है। गोस्वामी जी के ये नीतिवाक्य हर युग और काल में प्रासंगिक हैं।

गोस्वामी जी प्रेम को बड़ा पवित्र मानते थे। वे समस्त मानव को सलाह देते है कि अपने मान्यमित्र से जब प्रेम करें तो कपट, छल, प्रपंच रूपी खटाई से उस प्रेम रूपी दूध को दूर रखे क्योंकि एक बार यदि प्रेम रूपी दूध में कपट रूपी खटाई पड़ी कि प्रेम रूपी दूध फट जायेगा फिर उसका स्वाद हमेशा के लिए नष्ट हो जायेगा।

"जल पय सरिस बिकाइ, देखहु प्रीति की रीति भलि।
विलग होई रस जाइ, कपट खटाइ परत पुनि।"[10]

किष्किन्धा काण्ड में गोस्वामीजी ने सच्चे मित्र के लक्षण गिनाये हैं –

"जे न मित्र दुःख होंहि दुखारी,
तिन्हहि विलोकत पातक भारी।
निज दुःख गिरि सम रज करि जाना,
मित्रक दुःख रज मेरू समाना।
जिनके असि मति सहज न आई,
ते सठ कत हठि बरत मिताई।
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा,
गुन प्रगटै अवगुनहि दुरावा।
देत लेत मन संक न घरई,
बल अनुमान सदा हित करई।
विपत्तिकाल कर सत गुन नेहा,
श्रुति कह संत मित्र गुन एहा।"[11]

कवि के अनुसार इन गुणों के आधार पर सच्चे मित्र की परख करनी चाहिए। इसके पश्चात वे कुमित्रों के लक्षण बताते हैं –

"आगे कह मृदु वचन बनाई, पाछे
अनहित मन कुटिलाई।
जा कर चित अहि गति सम भाई,
अस कुमित्र परिहरेहि भलाई।"[12]

तत्पश्चात नीति युक्त वचन कहते हैं –

"सेवक सठ, नृप कृपन, कुनारी,
कपटी मित्र सूल समचारी।"[13]

अतः इन चारों को त्याग देने में ही भलाई है।

कहाँ जाना चाहिए और कहाँ न जाना चाहिए उस पर गोस्वामी जी लिखते हैं कि यद्यपि यह संदेह नहीं कि मित्र, स्वामी, पिता और गुरु के घर बिना बुलाये भी

जाना चाहिए परन्तु जहाँ इनमें से कोई विरोध मानता हो उनके घर जाने से कल्याण नहीं होता –

"यदपि मित्र प्रभु, पितु, गुरु, गेहा,
जाइअ बिनु बोलेहुँ न संदेहा।
जदपि विरोध मान जहँ कोई,
तहाँ गएँ कल्यानु न होई। "[14]

ज्ञान गुरु से मिलता है पर गुरु सद्गुरु होना चाहिए ऐसे सद्गुरु के वचनों पर जिन्हें विश्वास नहीं होता, उन्हें सुख और सिद्धि स्वप्न में भी सुगम नहीं होती–

गुरु के वचन प्रतीति न जेही,
सपनेहु सुगम न सुखनिधि तेही।

जो व्यक्ति बिना विचारे शीघ्रता से कोई कार्य करता है उसे पीछे पछताना पड़ता है गोस्वामी जी लिखते हैं –

"अनुचित उचित काज किछु होऊ,
समुझि करिअ भल कह सब कोऊ।
सहसा करि पाछे पछिताहीं,
कहहिं बेद बुंध ते बुध नाहीं।"[15]

राम को वनवास दिया गया, सीता को नहीं, फिर भी सीता उनके साथ अयोध्या का राज छोड़कर गई, सीता को राम के साथ बन में देख कर जनक जी दुःखी तो हुए परन्तु सीता के उनके पति–प्रेम को देखकर भावुक होकर कहने लगे –

"तापस वेष जनक सिय देखी,
भयउ पेमु परितोष विसेषी।
पुत्रि पवित्र किए कुल दोऊ,
सुजस धवल जग कह सब कोऊ।"[16]

यह भारतीय नारी का आदर्श स्वरूप है जिसका अनुकरण समाज करेगा ऐसी आशा गोस्वामीजी को है। इसके साथ गोस्वामीजी नीतियुक्त वचन कहते नहीं चुकते –

"धीरज, धर्म, मित्र अरू नारी,
आपद काल परिखिअहि चारी।"[17]

आरण्यकाण्ड में गोस्वामीजी लिखते हैं कि यदि कोई दुष्ट व्यक्ति, वर्त्तमान समय में कोई गुण्डा तत्व या दबंग, अचानक विनम्र होकर बहुत मीठी वाणी बोले तो सावधान हो जाना चाहिए कि वह अवश्य ही कोई कुचक्र कर अपना उल्लू सीधा करना चाहता है और जिस व्यक्ति से वह चापलूसी भरी बातें कह रहा है उसे अवश्य ही संकट में डालना चाहता है –

"नवनि नीच कै अति दुखदाई,
जिमि अंकुस, धनु उरग बिलाई।
भयदायक खल के प्रिय बानी,
जिमि अकाल के कुसुम भवानी।"[18]

गोस्वामी जी लिखते हैं इन नौ व्यक्तियों से विरोध कल्याणकारी नहीं होता –

"तब मारीच हृदय अनुमाना,
नवहिं विरोधे नहिं कल्याना।
सस्त्री, मर्मी, प्रभु सठ, धनी,
वैद, बंदि, कवि, भानस गुनी।"[19]

वे कहते हैं रोग, शत्रु, अग्नि, पाप, स्वामी और सर्प को कभी छोटा नहीं समझना चाहिए और इनके प्रति सदैव सावधान रहना चाहिए अन्यथा प्राण जाने का भय रहता है–

"रिपु रूज पावक पाप प्रभु, अहि गनिऊ न छोट।"[20]

अतः रोग का यदि कहीं लक्षण दिखे तो तुरंत चिकित्सा करा लेना चाहिए अन्यथा प्राण संकट में पड़ जाने की आशंका रहती है। बिना विवेक के पढ़ी हुई विद्या निष्फल और विपरीत फल देने लगती है –

"विद्या बिनु विवेक उपजाएँ।
श्रम फल पढ़े किएँ अस पाये।"[21]

विवेकवान व्यक्ति हाथ में चाकू पाने से वह फल काट कर खा सकता है परन्तु यदि किसी छोटे बच्चे के हाथ में चाकू आ जाय तो अपने अंग को ही काट कर लहुलुहान कर लेता है। आज का मानव विज्ञान द्वारा प्रदत्त वस्तुओं का ठीक उसी प्रकार दुरुपयोग कर रहा है। बालि वध के समय बालि श्रीराम से प्रश्न करता है –

मैं बैरी सुग्रीव पिआरा, अवगुन कौन नाथ मोहि मारा।

राम उत्तर देते हैं –

"अनुज बधू भगिनी सुत नारी,
सुनु सठ कन्या सम ए चारी।
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकत जोई,
ताहि बंधे कछु पाप न होई।"[22]

अर्थात् छोटे भाई की स्त्री, बहन, भाँजी, पुत्र की स्त्री ये सभी अपनी पुत्री के समान है इन पर कुदृष्टि डालना पाप है।

यहाँ तक कि जहाँ गोस्वामी जी वर्षा ऋतु और शरद ऋतु का वर्णन करने लगते हैं, वहाँ भी नीति युक्त वचन कहते चलते हैं।

"दामिनि दमक रह न घन माहीं,
खल के प्रीति जथा थिर नाहीं।"[23]

दुष्ट तो स्वार्थ पूर्ति के लिए प्रेम दर्शाते हैं, स्वार्थ पूरा होते ही उनकी प्रीति उसी प्रकार लुप्त हो जाती है जैसे बादल में चमकने वाली बिजली नहीं ठहरती। राम कहते हैं हे लक्ष्मण! बादल पृथ्वी के समीप आकर बरस रहे है ठीक उसी प्रकार जैसे विद्या पाकर सज्जन विनम्र हो जाते हैं –

"बरषहि जलद भूमि निअराएँ,
जथा नवहिं बुध विद्या–पाएँ।"[24]

परन्तु गोस्वामी जी को यह अनुभव है कि यह बात केवल बुद्धिमान एवं संयमी लोगों पर लागू होती है परन्तु छुद्र बुद्धिवाले तो थोड़ा सा धन और विद्या पाकर उच्छृंखल हो जाते हैं।

"छुद्र नदी भरि चली तोराइ।
जस थोरेहुँ धन खल इतराई।"[25]

गोस्वामी को पूर्ण अनुभव है कि अक्समात एक ही क्षण में कोई विद्वान नहीं हो जाता क्योंकि सद्गुण और विद्या धीरे–धीरे सज्जन के हृदय और मस्तिष्क में एकत्रित होते हैं –

"सिमटि–सिमटि जल भरहि तलावा,
जिमि सद्गुण सज्जन पहि आवा।"[26]

अतः सद्गुण, सच्चे ज्ञान से उत्पन्न होते हैं वह भी धीरे–धीरे अक्समात नहीं अतः विद्या पाने वाले विद्यार्थी को असफलता से निराश नहीं होना चाहिए। ज्ञान प्राप्ति की ओर प्रयत्नपूर्वक लगे रहना चाहिए।

परंतु यह ध्यान रहे विषय वासना ज्ञानी व्यक्ति के ज्ञान को हर लेती है फिर ज्ञान काम में नहीं आता तब तक जब तक कोई ज्ञानी गुरु उसे बोध नहीं कराता –

"सुनि सुग्रीव परम भय माना।
विषय मोर हरि लिन्हेउ ग्याना।"[27]

सद्गुरु के मिलन से ही संशय नष्ट हो जाते हैं –

"सद्गुरु मिले जाहिं जिमि संसय भ्रम समुदाइ।"

गोस्वामी जी का उपदेश है कि सबसे मधुर वचन ही बोलना चाहिए क्योंकि मधुर वचन से बिगड़े हुए काम भी बन जाते हैं –

"तुलसी मीठे वचन से सुख उपजत चहुँ ओर
बसीकरन यह मंत्र है, परिहरू वचन कठोर।"[28]

अतः हमें सदा मधुर बोलना चाहिए यह नीति है। गोस्वामी जी का मत है कि मान प्रतिष्ठा और प्रेम दूर रहने पर ही बनी रहती है। समीप रहने से और बार–बार मिलने पर व्यक्ति के प्रेम और सम्मान में खटाश पड़ जाती है जैसे गंगा के समीप रहने वाले लोग गंगा के उत्तम जल का अनादर करने लगते हैं –

"मरजादा दूरहि रहे, तुलसी किये विचारि।
निपट निरादर होत है, जिमि सुरसरि वर बारि।।"[29]

गोस्वामी जी के अनुसार जो मनुष्य दूसरों के यश को मिटाकर अपना यश बढ़ाना चाहते हैं उनके मुँह पर ऐसी कालिख लगती है कि वह बार–बार धोने पर भी मरने के दिन तक नहीं मिटती –

"तुलसी जे किरति चहहिं, पर की कीरति खोई।
तिनके मुँह मसि लागिहैं मिटहिं न मरिहैं धोई।"[30]

गोस्वामीजी के रामचरित् मानस में देश प्रेम का भी उपदेश है उनके राम कहते हैं –

"जद्यपि सब बैंकुंठ बखाना,
बेद पुरान विदित जगु जाना।
अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ,
यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ।"[31]

यहाँ राम द्वारा अपनी मातृभूमि की इस प्रकार से प्रशंसा पाठकों के हृदय में अपनी मातृभूमि के प्रति प्रेम भरने की नीति और प्रयास है।

तुलसी की पुनरुत्थानवादी नीति

गोस्वामी जी पुनरुत्थानवादी थे। रमेश कुन्तल मेघ के अनुसार "तुलसी ने मुस्लिम मध्यकाल में हिन्दू मध्यकाल के स्वप्नों को प्रस्तुत किया है, तथा हिन्दू मध्यकाल के आदर्शों को मुस्लिम मध्यकाल हिन्दू–जन जीवन की तुलना में परखा भी है। इसके अलावा तुलसी ने कवि से अधिक एक संत एवं भक्त की दृष्टि से काव्य रचना की है। उन्होंने अकबर और जहाँगीर काल में जीवित रहते हुए एक मिथक कथा को गुप्तकालीन संस्कृति के वृत में संवारा है।"[32] उनके 'रामचरित् मानस' का आधार बाल्मीकि रामायण और अध्यात्म रामायण ही मूल रूप से रहा है। उन्होंने वैदिक और पौरणिक युग की समाज व्यवस्था को मुस्लिम मध्यकाल काल के लिए भी आदर्श माना है यही समाज व्यवस्था गुप्तकाल और पुष्यमित्र शुंग के शासन काल तक कायम रही थी। यही कारण है कि वर्णाश्राम व्यवस्था और नारी के प्रति उनकी दृष्टि संतोषजनक नहीं रही। जब वे कहते हैं –

"सापत ताड़त परुष कहंता,
बिप्र पूज्य अस गावहिं संता।
पुजिय बिप्र सीलगुण हीना,
सूद्र न गुन गन ग्यान प्रवीना।"[33]

तो आश्चर्य होता है। शाप देता हुआ मारता हुआ और कठोर वचन कहता हुआ भी ब्राह्मण पूजनीय होता है ऐसा संत कहते हैं यहाँ तक तो माना जा सकता है परन्तु शील गुण से हीन ब्राह्मण पूजनीय है और सम्पूर्ण गुणों से युक्त ज्ञान में निपुण भी शूद्र पूजनीय नहीं होता यह वाक्य अत्यंत ही भर्त्सना करने योग्य है और आज के युग में या किसी भी युग में मान्य नहीं है। तुलसी के युग में भी कबीर, रैदास, मलूक दास आदि संत पूजनीय थे, आज भी पूजनीय है और आगे भी पूजनीय रहेंगे। ऐसी ही कुछ पंक्तियाँ तुलसी को मनुवादी, ब्राह्मणवादी बना देती है जिससे आधुनिक युग में उनकी आलोचना होती है, ये वाक्य समाज को तोड़ने वाले है अतः यह नीति युक्त कथन आज के युग में मान्य नहीं है। आचार्य शुक्ल ने लिखा है कि यह चौपाई प्रसिद्ध नीतिज्ञ और लोक व्यवस्थापक चाणक्य के इस वचन का अनुवाद है –

"पतितोऽपि द्विज श्रेष्ठो न च शूद्रो जितेन्द्रियः।"[34]

ठीक उसी प्रकार नारी के आठ अवगुणों की चर्चा भी चाणक्य नीति के इस श्लोक में मिलता है –

"अनृतं साहसं, माया, मूर्खत्व मतिलोभता।
अशौचत्वं निर्दयत्यं, स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः"

इसी के अनुरूप गोस्वामीजी ने भी नारी के दोष गिनाये हैं।

"नारि–स्वभाव सत्य कवि कहहीं,
अवगुन आठ सदा उर रहहीं।
साहस, अमृत, चपलता माया,
भय अविवेक असोच अदाया।"[35]

आज की नारी मूर्खा, कायर, अविवेकी नहीं है। वह उच्च शिक्षा पाकर ऊँचे पदों पर कार्यरत है। स्वाधीनता संग्राम में अनेक वीर नारियों ने प्राण देकर अपना योगदान दिया था। अतः आज के युग में तुलसी के ये नीतिवाक्य आलोचना के विषय हो सकते हैं।

यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि गोस्वामी के कुछ नीतिवाक्य तो उनके जीवनानुभवों के परिणाम है और कुछ उन्होंने विभिन्न शास्त्रों जैसे महाभारत, श्रीमद् भागवत, गीता, मनुस्मृति, चाणक्य नीति दर्पण आदि ग्रंथों का अनुशीलन कर उनसे लिया है। इसलिए गोस्वामी जी के नीति वचनों में उन पुराने ग्रंथों युगों की बातें आ गई हैं जिनकी मान्यता उस समय थी परन्तु 21वीं शताब्दी के समाप्त हो चुकी है। फिर भी उन पुराने ग्रंथों में भी कुछ मूल्यवान नीति युक्त वचन आज के युग में भी मान्य है जैसे –

"सास्त्र सुचिंतित पुनि–पुनि देखिय,
भूप सुसोवित बस नहिं लेखिय।
राखिय नारि जदपि उर माहीं,
जुवती शास्त्र नृपति बस नाहीं।"[36]

यह चौपाई शुक्रनीति के इस श्लोक का अनुवाद है –

शास्त्रं सुचिन्तित मयोपरि चिन्तनीयमा।
राधितोऽपि नृपतिः परिशंक नीयः।
क्रोडे कृतापि युवती परिरक्षणीया शास्त्रे
नृपे च युवतौ च कुतो वाशत्वम्।

ऐतिहासिक दृष्टि की न्यूनता दोष से शायद ही कोई कवि या साहित्यकार बचा हो अतः क्षीर–नीर विवेक गुण को आत्मसात कर उनके नीति वचनों का अनुशीलन आज भी श्रेयष्कर है।

राजधर्म और राजनीति

राजनीति जीवन का प्रधान अंग है इससे सम्पूर्ण जन मानस का जीवन प्रभावित होता है। प्लेटो, अरस्तू, मार्क्स, भतृहरि, चाणक्य, मनु, बिदुर आदि ने अपने–अपने युग में राजनीति की व्याख्या की है। गोस्वामी जी आदर्श राज्य के रूप में राम राज्य को स्थान देते हैं। वे वर्त्तमान राजा को यह संकेत करते हैं कि –

"जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी।
सो नृप अवसि नरक अधिकारी।"[37]

वे राजा के गुणों की चर्चा करते हुए लिखते हैं –

"माली भानु किसान सम, नीति निपुन नर पाल।
प्रजा भाग बस होहिंगे, कबहुँ–कबहुँ कलि काल।"[38]

अर्थात् राजा को माली के समान प्रजा रूपी वाटिका का पालन संरक्षण करना चाहिए, सूर्य के समान तेज प्रताप से प्रजा में विश्वास जगानेवाला और ज्ञान का प्रकाश फैलानेवाला होना चाहिए। किसान के समान अपने सुख का परित्याग करके प्रजा की समृद्धि हेतु संलग्न रहना चाहिए। वे कहते हैं –

"मुखिया मुख सो चाहिए, खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सफल अंग, तुलसी सहित विवेक"[39]

वह शासक श्रेष्ठ है जो शासन कम करे। गोस्वामी जी ने दण्डहीन राज्य को आदर्श राज्य माना है –

"दंड जतिन कर भेद जहँ, नर्तक नृत्य समाज।
जितहु मनहि सुनिऊ अस, रामचन्द्र के राज।"[40]

राजनीति की चार दिशाओं का भी तुलसी ने उल्लेख किया है –

"साम दाम, अरू, दण्ड विभेदा।
नृप उर बसहिं नाथ कह वेदा।"

आदर्श राज्य वही है जहाँ मंत्री भयरहित रह कर प्रजा के लिए हितकारी नीति निर्धारित करे –

"सचिव वैद गुरु तीन जौ प्रिय बोलहिं भय आस।
राजधर्म तन तीनिकर, होइ वेगहि नास।"[41]

कवि कहता है कि जहाँ मंत्री भय अथवा आशा से प्रिय वाणी हित की बात न कहकर चापलूसी करने लगता है तो राज का नाश हो जाता है यदि चिकित्सक भय अथवा आशा से प्रिय बोलने लगता है तो शरीर का नाश होता है और यदि गुरु भय अथवा आशा से प्रिय वाणी बोले तो धर्म अर्थात् ज्ञान और विवेक का नाश होता है।

शक्ति के अभिमान से पराई स्त्री को बलपूर्वक अपने घर में रखना अत्यंत ही निंदनीय कार्य है इससे राज्य का नाश हो जाता है। कालांतर में अधिकांश लड़ाइयाँ नारी हरण को लेकर या नारी अपमान के कारण हुई है विभीषण रावण को समझाते हैं –

"जो आपन चाहै कल्याना,
सुजस सुमति, सुमगति सुख नाना।
तो परनारि लिलार गोसाई,
तजउ चउथ चंदा की नाई।"[42]

संसार को जीत लेनेवाला पराक्रमी राजा भी जीवमात्र से द्रोहकर सुरक्षित नहीं रह सकता –

"चौदह भुवन एक पति होई, भूत द्रोह तिष्ठई नहिं सोई।"[43]

रामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड में एक ऐसा नीति वाक्य कहा गया जिसे आँख मुंद कर नहीं अपनाया जाना चाहिए। देश के अनेक राजाओं ने इसी नीति का अनुसरण कर विदेशी शत्रु को अनेक अपराध करने के बावजूद क्षमा कर दिया था और अंत में उन्हीं के हाथों मारे गये वह नीति थी –

"सरणागत कहूँ जे तजहि निज अनहित अनुमानि।
ते नर पाँवर पाप मय तिनहि विलोकत हानि।"[44]

पृथ्वीराज चौहान अपने हाथ में आये विदेशी शत्रु को इसी नीति के तहत क्षमा कर दिये थे और कई बार क्षमा कर दिये थे फलस्वरूप 1192 ई0 में तराइन के द्वितीय युद्ध में पृथ्वीराज को अपनी जान गँवानी पड़ी और देश में विदेशियों के शासन का प्रारम्भ हुआ। यह नीति कथन राम के मुख से कहलाई गई है राम आगे कहते हैं–

"कोटि बिप्र बध लागहि जाहू।
आएँ सरन तजऊ नहि ताहू।
जोपै दुष्ट हृदय सोई होई।
मोरे सन्मुख आव को सोई।"[45]

यह नीति केवल राम के समान लोगों के लिए है साधारण लोगों के लिए नहीं। वास्तविकता यह है कि यहाँ राम की शरणागत वत्सलता दिखाई गई है, जिससे पापी–से पापी व्यक्ति भी उनकी शरण में जाने में किसी प्रकार का संकोच न करे। यह नीतिवाक्य की तरह दिखने वाला कथ्य नीति वाक्य है ही नहीं अतः इसे नीतियुक्त वाक्य मानकर अविवेकपूर्ण ढंग से जीवन में नहीं अपनाना चाहिए। नीति तो यह कहती है कि शत्रु भले ही अकेला हो उसे छोटा नहीं समझना चाहिए –

"रिपु तेजस्वी अकेलअपि, लघु करि गनिय न ताहि।"[46]

उस पर कृपा करना तो राज्य और अपने विनाश को आमंत्रण देना है –

रिपु पर कृपा परम कदराई।

अर्थात् शत्रु पर कृपा करना कायरता है।

युद्ध सबसे अंतिम विकल्प है समुद्र से पंथ मांगने के क्रम में यह बताया गया है कि छिनने की शक्ति रहने पर भी पहले विनयपूर्वक माँगना यह नीति है –

"कह लंकेस सुनहु रघुनायक,
कोटि सिंधु सोषक तब सायक।
जद्यपि तदपि नीति अस गाई,
विनय करिअ सागर सन जाई"[47]

फिर लक्ष्मण के माध्यम से अकर्मण्यता और आलस्य का विरोध किया गया है –

"नाथ देवकर कवन भरोसा,
सोषिअ सिंधु करिअ मन रोसा।
कादर मन कहुँ एक अधारा,
दैव–दैव आलसी पुकारा।"[48]

यहाँ बताया गया है कि युद्ध अंतिम समाधान है पहले शांति के पथ का अनुशरण करना चाहिए जब फल

न निकले तो शस्त्र का अवलम्बन करना चाहिए राम कहते हैं–

सुनत विहसि बोले रघुबीरा, ऐसेहि करब घरहु मन धीरा।

परन्तु जड़, मूर्ख और दुर्जन विनम्रता को कमजोरी मानकर उसका उपहास करते हैं तब राम कहते हैं –

"विनय न मानत जलधि जड़, गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब, भय बिनु होई न प्रीति।"[49]
लक्ष्मण बान सरासन आनू।

आगे गोस्वामीजी नीति की झड़ी लगा देते हैं –

"सठ सन विनय कुटिल सन प्रीति,
सहज कृपन सन सुन्दर नीति।
ममता रत सन ज्ञान कहानी,
अति लोभी सन विरति बखानी
क्रोधहि सम कामहि हरि कथा,
ऊसर बीज बएँ फल जथा।"[50]

ाम कहते हैं कि मूर्ख से विनय, कुटिल कपटी व्यक्ति से प्रेम, स्वभाविक कृपण के सामने नीति (उदारता का उपदेश) ममता में फँसे व्यक्ति सामने ज्ञान की चर्चा, लोभी के सामने वैराग्य का वर्णन, क्रोधी के समक्ष शमन (शांति) की बात और कामी के समक्ष हरि कथा की चर्चा करना उसी प्रकार व्यर्थ है जैसे बंजर भूमि में बीज बोना। फिर कहते हैं स्वभाव से नीच दंड से सुधरते हैं –

"काटहिं पर कदली फरई, कोटि जतन कोउ सीच।
विनय न मान खगेस सुनु, डाटेहिं पइ नव नीच।"[51]

तुलसी की समन्यवादी नीति –

गोस्वामी जी का युग दार्शनिक दृष्टि से विविधता का युग था। उस युग में अद्वैतवाद, द्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, शुद्धाद्वैतवाद के मतवादी संत अपने–अपने मत को प्रचारित कर रहे थे। साथ ही शैव, वैष्णव, शाक्त मतावलम्बियों में आपसी संघर्ष के इतिहास भी रहे हैं। गोस्वामी जी रामानुजाचार्य के मतानुयायी होने के कारण विशिष्टाद्वैतवाद को मानते थे फिर भी उन्होंने संघर्ष का मार्ग न अपनाकर समन्वय का मार्ग अपनाया। उनके विचारों में अद्वैतवाद और विशिष्टाद्वैतवाद का समन्वय मिलता है –

"कोउ कह सत्य झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबल करि मानै।
तुलसिदास परिहरै तीनि भ्रम, सौ आपुन पहिचाने।

इसके द्वारा तुलसी ने दार्शनिक विद्वेष एवं वैमनस्य को दूर किया। तुलसी के पूर्व ही भक्ति के क्षेत्र में ब्रह्म के निर्गुण और सगुण रूपों की उपासना का संघर्ष चला आ रहा था। तुलसी ने ब्रह्म को निर्गुण और सगुण दोनों मान लिया और बड़ी सहजता से प्रमाण भी प्रस्तुत किया –

"बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना,
कर बिनु करम करइ विधि नाना।
आनन रहित सकल रस भोगी,
बिनु बानी बकता बड़ जोगी।"[52]

ऐसे निर्गुण ब्रह्म धर्म की रक्षा, भक्तों से प्रेम करने हेतु सगुण साकार होकर अवतरित होते हैं –

"जब–जब होई धरम कै हानी।
बाढ़हि असुर अधम अभिमानी।"
"करहिं अनीति जाइ नहि बरनी।
सीदहिं बिप्र धेनुसुर धरनी।
तब–तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा,
हरहि कृपा निधि सज्जन पीरा।।"[53]

वे लिखते हैं –

"सगुनहि अगुनहि नहि कछु भेदा। गावहि मुनि पुरान बुध बेदा।
अगुन अरूप अलख अज जोई, भगत प्रेम–बस सगुन सो होई।"[54]

अतः गोस्वामी जी ने विभिन्न दार्शनिक मतवादों के बीच माध्यम मार्ग निकाल कर तथा निर्गुण एवं सगुण के विवाद को दूर करके दोनों में समन्वय स्थापित किया। यह गोस्वामीजी की सम्वन्यवादी दार्शनिक नीति थी।

जो गुण रहित सगुन सोई कैसे, जलु हिम उपल बिलग नहिं जैसे।

शिव को अपना सर्वस्व मानने वाले 'शैव' कहलाते हैं और विष्णु को अपना सर्वस्व मानने वाले भक्त 'वैष्णव' कहलाते हैं परन्तु तुलसी के युग में शैव और वैष्णवों में आपसी द्वन्द्व दिखाई देता है। तुलसी इन दोनों मतों में सम्वन्य स्थापित करने के लिए एक ओर शिव के मुख से कहलाते हैं –

"सोई मम इष्ट देव रघुवीरा। सेवत जाहि सदा मुनि धीरा।"

तो दूसरी ओर राम द्वारा यह कहलाते हैं –

"संकर प्रिय मम द्रोही, शिवद्रोही मम दास
ते नर करहि कलप भरि, घोर नरक महुँ बास।"[55]

इस प्रकार उन्होंने राम को शिवजी का अनन्य भक्त सिद्ध किया। उस युग में वैष्णव और शाक्तों में भी वैमनस्य था उनमें भी आपसी संघर्ष चलता रहता था तुलसी ने सीता द्वारा पार्वती की स्तुति करा कर वैष्णव और शाक्तों में समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया –

"नहिं तब आदि मध्य अवसाना।
अमित प्रभाव बेद नहिं जाना।
भव–भव विभव पराभव कारिनि।
विश्व विमोहिनि स्वबस विहारिनि।।"[56]

इस प्रकार गोस्वामी जी की नीति विभिन्न दार्शनिक मतवादो, संगुण–निर्गुण शैव–शक्ति, शैव–वैष्णव इन सब के बीच समन्वय स्थापित करने की थी ताकि सभी अपने मतों का अनुसरण करते हुए मिल–जुलकर प्रेमपूर्वक जीवन–यापन करें।

गोस्वामी जी ने भाग्यवाद और पुरुषार्थवाद दोनों के बीच समन्वय स्थापित किया। उन्होंने कहा कि मनुष्य को कर्म करना चाहिए क्योंकि ईश्वर ने इस संसार को कर्मप्रधान ही बनाया है –

करम प्रधान विस्व करि राखा।
जो जस करइ सो तस फल चाखा।।

फिर भी कभी–कभी संयोगवश मनुष्य वहाँ पहुँच जाता है जिसकी उसने कल्पना भी नहीं की है और फल विपरीत मिलने लगता है –

"तुलसी जसी भवतब्यता तैसी मिलइ सहाइ
आपनु आवइ ताहि पहिं ताहि तहाँ लै जाइ।"[57]

फिर भी मनुष्य को इस बात की चिंता न करके कर्म करना चाहिए –

"सुभ अरु असुभ करम अनुहारी।
ईस देइ फल हृदय विचारी।।

करइ जो करमु पाव फल सोई।
निगम नीति असि कह सब कोई।।

तुलसी के युग में ज्ञानियों और भक्तों में बड़ा वाद–विवाद चलता था गोस्वामी जी ने ज्ञान और भक्ति के बीच समन्वय स्थापित किया उन्होंने कहा –

"भगतिहि ग्यानहि नहिं कछु भेदा।
उभय हरहिं भव संभव खेदा।"[58]

परन्तु –

"ग्यान पंथ कृपान कै धारा। परत खगेस होह नहिं बारा।
जो निर्बिघ्न पंथ निर्बहई। सो कैवल्य परमपद लहई।।"[59]

वे लिखते हैं –

"बिनु गुरु होइ कि ग्यान, ग्यान कि होई बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुरान सुख कि लहिऊ हरि भगति बिनु।"[60]

वैराग्य को माया निगल जाती है और ज्ञान व्यर्थ हो जाता है परन्तु भक्ति पर माया की एक नहीं चलती। इसलिए गोस्वामी जी कहते हैं –

जप तप नियम जोग निज धर्मा।
श्रुति संभव नाना सुभ कर्मा।।
ग्यान, दया, दम तीरथ मज्जन।
जहँ लगि धर्म कहत श्रुति सज्जन।।
अगम निगम पुरान अनेका।
पढ़े सुने कर फल प्रभु एका।
तब पद पंकज प्रीति निरंतर।
सब साधन कर यह फल सुन्दर।।"[61]

इस प्रकार गोस्वामी जी ने ज्ञान और भक्ति दोनों को महत्त्व दिया है।

काव्य क्षेत्र में तुलसी की समन्यवादी नीति

तुलसी के समय में काव्याभिव्यक्ति के लिए अनेक शैलियाँ प्रचलित थी। उन्होंने अपने समय में प्रचलित वीरगाथाकाल या आदिकाल की छप्पय पद्धति, विद्यापति और सूरदास की गीति–पद्धति गंग आदि भाटों की कवित्त–सवैया पद्धति, नीति काव्यों की सूक्ति पद्धति, प्रेमाख्यात्मक काव्यों की दोहा चौपाई प्रबंध–पद्धति आदि का सफल प्रयोग किया। यहाँ तक उन्होंने, सोहर छंद, बरबै छंद और मंगल गीतों की रचना करके काव्य के क्षेत्र में आदिकाल से लेकर अपने समय तक की प्रायः सभी काव्य छंदों और शैलियों के बीच समन्वय स्थापित किया। उन्होंने रामचरित् मानस एवं अन्य ग्रंथों में राम की महिमा गाई तो कृष्ण गीतावली लिखकर कृष्ण की महिमा गायी। उन्होंने रामचरित् मानस में नवों रसों का समन्वय किया। अतः उनकी काव्य कला भी समन्वय की विराट चेष्टा है।

अन्य नीतियाँ

गोस्वामी जी एक मनोविश्लेषणवादी की भाँति मनुष्य के मन की अतल गहराइयों में प्रवेश कर मन और बुद्धि के दोषों के कारण का विश्लेषण करते हैं उनका निदान भी प्रस्तुत करते हैं। उनका कहना है कि काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, ईर्ष्या, धन तथा लोकप्रतिष्ठा का मोह ये सब माया के प्रबल सैनिक है, ये कब हमारे मस्तिष्क के भीतर इंद्रियों के द्वार से प्रवेश कर जाते हैं यह बड़े–बड़े ज्ञानी और साधकों को भी पता नहीं चलता, शरीर रहते इन पर विजय प्राप्त नहीं किया जा सकता अतः इनके प्रति सतर्क रहने की आवश्यकता है वे कहते हैं –

मोह न अंध कीन्ह केहि केही।
को जग काम नचाव न जेही।
तृस्नाँ केहि न कीन्ह बौराहा।
केहि कर हृदय क्रोध नहीं जारा।
ग्यानी तापस सूर कवि कोविद गुन आगार
केहि कै लोभ बिडंबना, कीन्ह न एहिं संसार।
श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचनि के नैन सर, को असलाग न जाहि।
मच्छर कहि कलंक न लावा। कहि न सोक समीर डोलावा
चिंता साँपिन को नहि खाया।
को जग जाहि न व्यापी माया।"[62]

वास्तव में संसार की अच्छी से अच्छी नीतियाँ, अच्छे से अच्छे संगठन, दार्शनिक मठ, गाँधीवादी और मार्क्सवादी संगठन कुछ काल तक अपने आदर्श मार्ग पर चलने के पश्चात पुनः अधोगति को प्राप्त हो जाते हैं। समाज में जितने अपराध और धृष्ट आचरण होते हैं उनके मूल में ये ही मन के रोग है जो हमारे मन की भलमनसाहत को हर लेते हैं। ज्ञान से इन पर विजय नहीं पाया जा सकता भक्ति और प्रेम ही इन पर विजय पाने का मार्ग है ऐसा गोस्वामी जी का मत है।

गोस्वामीजी दरिद्रता को परम दुख मानते हैं, अत्याधिक दरिद्रता के कारण भी अपराध होते हैं –

नहि दरिद्र सम दुख जगमाहीं।"[63]

अतः इसके निवारण के लिए सज्जनों की संगति करना चाहिए। शक्ति सामर्थ्यवान होने पर परोपकार करना चाहिए।

पर उपकार वचन मन काया।
संत सहज सुभाउ खग राया।

वे कहते भी हैं –

"परहित सरिस धर्म नहीं भाइ।
परपीड़ा सच नहिं अधमाइ।"[64]

बस इसी नीति को लोग यदि अपने आचरण में उतार लें तो सर्वत्र सुख ही सुख होगा। संसार स्वर्ग तुल्य हो जायेगा। कोई किसी का न शोषण करेगा और न ही कोई किसी के अधिकारों का दोहन करेगा।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम पाते हैं कि ऐतिहासिक न्यूनता दोष से शायद ही कोई कवि या साहित्यकार बचा हो अतः क्षीर–नीर–विवेक गुण को आत्मसात कर उनके नीति वचनों का अनुशीलन आज भी श्रेयष्कर है। वे एक महाकवि और अनेक प्राचीन ग्रंथों के नीति वचनों के शोधकर्त्ता थे। कई ग्रंथों के लम्बे–लम्बे श्लोकों को उन्होंने किस प्रकार दो पंक्तियों वाले दोहों में संशलिष्ट कर दिया है यह भी देखने योग्य है। उदाहरण के लिए शुक्रनीति का यह श्लोक देखा जा सकता है –

शास्त्रं सुचिन्तितमयोपरि चिन्त नीयमा –
राधितोऽपि नृपतिः परिशंक नियः।
क्रोडे कृतापि युवती परिरक्षणीया शास्त्रे
नृपे च युवतौ च कुतो वाशत्वम।

इसी भाव को गोस्वामी जी इस प्रकार लिखते हैं –

सास्त्र सुचिंतित पुनि–पुनि देखिय।
भूप सुसोवित बस नहिं लेखिय।
राखिय नारि जदपि उर माही।
जुवती सास्त्र नृपति बस नाही।

अतः उन्होंने विभिन्न शास्त्रों जैसे उपनिषद महाभारत, श्रीमद् भागवत, गीता, मनुस्मृति, चाणक्यनीति आदि ग्रंथों का गहन अध्ययन कर वहाँ से कुछ नीतियों को लिया था और कुछ उनके जीवानुभवों के परिणाम थे जिन्हें उन्होंने अपने युग से प्राप्त किया था। वे सचमूच भारतीय संस्कृति के धरोहर हैं। अतः ऐसे महान कवि के नीति वचनों की प्रांसगिकता आज भी बनी हुई है और आधुनिक पीढ़ी इनके वचनों से लाभान्वित हो सकती है तथा एक सुन्दर समाज और देश के गठन में इन वचनों की महत्त्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ संख्या – 116*
2. *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ संख्या – 112*
3. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 04*
4. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 876*
5. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 09*
6. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 04*
7. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 653*
8. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 05*
9. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 10*
10. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 55*
11. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (किष्किंधाकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 591*
12. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (किष्किंधाकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 591*
13. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (किष्किंधाकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 591*
14. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 58*
15. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (अयोध्याकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 458*
16. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (अयोध्याकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 499*
17. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (अरण्यकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 536*
18. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (अरण्यकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 560*
19. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (अरण्यकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 561*
20. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (अरण्यकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 558*
21. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (अरण्यकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 557*
22. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (किष्किंधाकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 594*
23. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (किष्किंधाकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 598*
24. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (किष्किंधाकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 598*
25. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (किष्किंधाकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 598*
26. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (किष्किंधाकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 599*
27. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (किष्किंधाकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 603*
28. *वियोगी हरि – नीति की बातें पृष्ठ संख्या – 52*
29. *वियोगी हरि – नीति की बातें – पृष्ठ संख्या – 53*
30. *वियोगी हरि – नीति की बातें – पृष्ठ संख्या – 48*
31. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 788*
32. *रमेश कुन्तल मेघ – तुलसी आधुनिक बतायन से, पृष्ठ संख्या – 47*
33. *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – गोस्वामी तुलसीदास, पृष्ठ संख्या – 37*
34. *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – गोस्वामी तुलसीदास, पृष्ठ संख्या – 37*
35. *डॉ0 चन्द्रमान रावत, तुलसी के साहित्य के बदलते प्रतिमान पृष्ठ संख्या – 166*
36. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (अरण्यकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 575*
37. *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – गोस्वामी तुलसीदास, पृष्ठ संख्या – 35*
38. *वियोगी हरि – नीति की बातें – पृष्ठ संख्या – 13*
39. *वियोगी हरि – नीति की बातें – पृष्ठ संख्या – 15*
40. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 807*
41. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 646*
42. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 643*
43. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 647*
44. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 651*
45. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 651*
46. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (अरण्यकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 558*
47. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 656*
48. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 656*
49. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 661*
50. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 662*

51. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (सुन्दरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 662*
52. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 100*
53. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 103*
54. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 99*
55. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (लंकाकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 662*
56. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 187*
57. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (बालकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 130*
58. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 889*
59. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 894*
60. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 860*
61. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 828*
62. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 845*
63. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 897*
64. *गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित् मानस (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ संख्या – 822*